सावित्रीबाई फुले–भारत की पहली महिला शिक्षिका एवं समाज सुधारक

डा. सावित्री तड़ागी,

एसोसिएट प्रोफेसर/विभागाध्यक्ष (शिक्षा शास्त्र),
विद्यान्त हिन्दू पी.जी. कालेज, लखनऊ।

जन्म एवं प्रारम्भिक शिक्षा

सावित्रीबाई फुले का जन्म महाराष्ट्र के सतारा जिल, खंडाला तहसील के नायगाँव नामक स्थान पर 3 जनवरी सन् 1831 को हुआ। उनके पिता का नाम खण्डोजी नेवसे और माता का नाम लक्ष्मीबाई था। सतारा के माली समाज में इनके कुल को श्रेष्ठ गिना जाता था। उस दौर में दलितों के साथ बहुत भेदभाव होता था। उन्हें शिक्षा का अधिकार नहीं था। सावित्रीबाई फुले बाल्यकाल से पठन–पाठन में रूचि थी। उस समय महिलाओं की शिक्षा को बुरा माना जाता था। गॉव के एक मेले में एक पादरी ने यीशु के जीवन चरित्र छपी एक पुस्तक सावित्रीबाई को यह कहकर दी कि यह भगवान की पुस्तक है। तुम पढ़ तो नहीं पाओगी पर चित्र देखकर तुम्हारे चित्त को बहुत आनंद आयेगा।'' तत्समय 8 वर्ष की उम्र में ही सावित्रीबाई फुले एक पुस्तक अपने घर ले आईं जिसे उनके पिताजी ने फेंक देने को कहा। सावित्रीबाई ने यह कहकर किताब फेंकने से मना कर दिया कि ''यह मुझे भगवान के नाम पर दी गई है। मैं भगवान का निरादर नहीं करूंगी, भले ही समाज मुझे फांसी पर लटका दे''। इस प्रकार परिवार समाज से इस बारे में विद्रोह कर दिया। सन् 1840 में मात्र नौ वर्ष की आयु में ही उनका विवाह बारह वर्ष के ज्योतिबा फुले से हुआ। महात्मा ज्योतिबा फुले स्वयं एक महान शिक्षक, विचारक, कार्यकर्ता, समाज सुधारक, लेखक, दार्शनिक, संपादक और क्रांतिकारी थे।

स्वयं हुईं शिक्षित और छेड़ी महिला–शिक्षा की मुहीम

महात्मा ज्योतिबा फुले स्वयं एक महान शिक्षक, विचारक, कार्यकर्ता, समाज सुधारक, लेखक, दार्शनिक, संपादक और क्रांतिकारी थे। सावित्रीबाई पढ़ी–लिखी नहीं थीं। ज्योतिबा शिक्षा के माध्यम से समाज में जागृति लाने और नारी शिक्षा के पक्षधर थे, परन्तु समाज के विरोध के कारण प्रयास सफल नहीं हो पा रहा था। यह समस्या उन्होंने अपनी मौसी सगुणाबाई और पत्नी सावित्रीबाई के समक्ष रखी। सगुणाबाई का कथन था कि हमें शिक्षा की आवश्यकता है और तुम्हारे पास शिक्षा देने की सामर्थ्य है। उन्होंने कहा कि किसी समाज को बदलना है तो उस समाज की स्त्रियों को शिक्षित करना आवश्यक है। शिक्षित मातायें ही समाज को संस्कारवान पुत्र देती हैं। दोनों महिलायें तत्काल नारी शिक्षा के लक्ष्य की प्रथम छात्रायें बन गईं। अगले दिन से गॉव की अमराई की छॉव में अस्पृश्य नारी शिक्षा की पहली पाठशाला प्रारम्भ हुई। यह महाराष्ट्र में दलित नारी शिक्षा का पहला और ऐतिहासिक प्रयास था। साधनों के अभाव में आम की लकड़ी की कलम बनी और जमीन को लेखन पट्टिका बनाया गया। इसके साथ ही अक्षर ज्ञान आरम्भ हो गया।

दोनों ही छात्रायें बहुत जिज्ञासु और ज्ञानाग्रही थीं और अल्प समय में ही अक्षर–मात्रा आदि का ज्ञान प्राप्त पढ़ना लिखना भी सीख

लिया। सावित्रीबाई ने सर्वप्रथम वह ईसाई पुस्तक पढ़ी जो ईसाई पादरी ने मेले में दी थी। इसके बाद उन्होंने ज्योतिबा और सगुणाबाई द्वारा लाई गई भारतीय दर्शन, राजनीति, समाज और इतिहास आदि की पुस्तकें पढ़ीं। इनसे जो ज्ञान प्राप्त हुआ उससे उन्हें समाज में व्याप्त प्रथा–कुप्रथा के विषय में पता चला।

नारी शिक्षा का शुभारंभ करने हेतु ज्योतिबा द्वारा सहृदय ब्राह्मण तात्यासहब भिड़े के सहयोग से 01 जनवरी 1848 को पुणे महाराष्ट्र में पहला विधिवत विद्यालय खोला गया जिसमें गिनती की 6 छात्राओं ने पहले दिन प्रवेश लिया। इस प्रथम विद्यालय में सावित्रीबाई प्रथम स्त्री शिक्षिका बनी। उन्होंने शीघ्र ही दिखा दिया कि वह जितनी जिज्ञासु छात्रा रही हैं उतनी ही कुशल अध्यापिका भी हैं। सावित्रीबाई ने छात्राओं से मातृवत् व्यवहार करते हुए स्नेहपूर्वक अक्षरज्ञान कराया। वह पंचतंत्र की छोटी–छोटी कहानियों छात्राओं को चुन–चुन कर सुनाकर उन्हें व्यावहारिक ज्ञान देती थीं। वह भारत की सामाजिक व्यवस्था पर भी प्रकाश डालतीं और सच्चे समाज और मानव के विषय में कहती थीं कि ''जब तक हम इस बात का ज्ञान नहीं कर लेते कि मनुष्य एक ही ईश्वर की संतान हैं, तब तक ईश्वर का सही रूप समझाना कठिन है। ईश्वर की पहचान की पहली शर्त यह है कि हमें मानना होगा कि हम सभी भाई–भाई हैं।''

धीरे–धीरे पुणे में इस विद्यालय की चर्चा हुई और छात्राओं की संख्या में वृद्धि होती गई। सावित्रीबाई फुले कहा करती थीं–

''अब बिलकुल भी खाली मत बैठो, जाओ शिक्षा प्राप्त करो!

शादी के बाद ज्योतिबा ने ही उन्हें पढ़ना–लिखना सिखाया। बाद में सावित्रीबाई ने दलित समाज की ही नहीं, बल्कि देश की प्रथम शिक्षिका होने का गौरव प्राप्त किया। उस समय लड़कियों की दशा अत्यंत दयनीय थी और उन्हें पढ़ने लिखने की अनुमति तक नहीं थी। आज से लगभग 171 वर्ष पूर्व 3 जनवरी 1848 को अपने 18वें जन्मदिन पर पुणे में अपने पति के साथ मिलकर विभिन्न जातियों की नौ छात्राओं के साथ उन्होंने महिलाओं के लिए एक विद्यालय की स्थापना की। एक वर्ष में सावित्रीबाई और महात्मा फुले पाँच नये विद्यालय खोलने में सफल हुए। तत्कालीन सरकार ने इन्हें सम्मानित भी किया। एक महिला प्रिंसिपल के लिये सन् 1848 में बालिका विद्यालय चलाना कितना मुश्किल रहा होगा, इसकी कल्पना शायद आज नहीं की जा सकती। लड़कियों की शिक्षा पर उस समय सामाजिक पाबंदी थी। सावित्रीबाई फुले उस दौर में न सिर्फ खुद पढ़ीं, बल्कि दूसरी लड़कियों के पढ़ने का भी बंदोबस्त किया। उन्होंने देश के पहले किसान स्कूल की भी स्थापना की थी। 1852 में उन्होंने दलित बालिकाओं के लिए एक विद्यालय की स्थापना की।

समाज का विरोध

सावित्रीबाई फुले स्वयं इस विद्यालय में लड़कियों को पढ़ाने के लिए जाती थीं। लेकिन यह सब इतना आसान नहीं था। उन्हें लोगों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा। उन्होंने न केवल लोगों की गालियाँ सहीं अपितु लोगों द्वारा फेंके जाने वाले पत्थरों की मार तक झेली। स्कूल जाते समय धर्म के ठेकेदार व स्त्री शिक्षा के विरोधी सावित्रीबाई फुले पर कूड़ा–करकट, कीचड़ व गोबर ही नहीं मानव–मल भी फेंक देते थे। इससे सावित्रीबाई के कपड़े बहुत गंदे हो जाते थे अतः वो अपने साथ एक दूसरी साड़ी भी साथ ले जाती थीं जिसे स्कूल में जाकर बदल लेती थीं। इस सब के बावजूद उन्होंने हार नहीं मानी व स्त्री शिक्षा, समाजोद्धार व समाजोत्थान का कार्य जारी रखा।

फुले दंपति के दलित समाज उत्थान एवं शिक्षा का जितना तेजी से प्रचार–प्रसार हो रहा

था उतनी की प्रबलता से समाज के कतिपय उच्च वर्ग द्वारा उनका प्रबल विरोध भी हो रहा था। फुले दंपति द्वारा चाणक्य मंत्र कि ''देशहित के लिए राज्यहित, राज्य हित के लिए ग्रामहित और ग्रामहित के लिए पारिवारिक हितों का त्याग करना ही राष्ट्र धर्म है सामाजिक हित के लिए यदि प्रिय से प्रिय का भी त्याग करना पड़े तो सच्चे मानव को यह त्याग कर देना चाहिए'' को आत्मसात किया और समाज के विरोध के चलते फुले दंपति अपना धनकवाड़ी का घर छोड़कर पुणे आ गये। यहॉ पर उन्हें समाज से भरपूर सहयोग मिल रहा था। गॉव के लोग आकर उनसे अपने गॉव में स्कूल खोलने का आग्रह करते थे। दिसम्बर 1849 तक वे दस विद्यालय स्थापित कर चुके थे। यह एक ऐतिहासिक उपलब्धि थी। फुले दंपति द्वारा दी जाने वाली शिक्षा कार्यक्रमों में और भी विषय जुड़ गए थे। इनमें बाल–विवाह, छुआछूत, शिशु–हत्या जैसी सामाजिक कुरीतियों का विरोध एवं जनचेतना जागृत करना था।

विधवा पुनर्विवाह के लिए संघर्ष

स्त्री शिक्षा के साथ ही विधवाओं की शोचनीय दशा को देखते हुए उन्होंने विधवा पुनर्विवाह की भी शुरुआत की। 1854 ज्योतिबा और सावित्रीबाई फुले ने एक अनाथ–आश्रम खोला, यह भारत में किसी व्यक्ति द्वारा खोला गया पहला अनाथ–आश्रम था। साथ ही अनचाही गर्भावस्था की वजह से होने वाली शिशु हत्या को रोकने के लिए उन्होंने बालहत्या प्रतिबंधक गृह भी स्थापित किया। आज देश में बढ़ती कन्या भ्रूण हत्या की प्रवृत्ति को देखते हुए उस समय कन्या शिशु हत्या की समस्या पर ध्यान केंद्रित करना और उसे रोकने के प्रयास करना कितना महत्त्वपूर्ण था इस बात का अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं।

विधवाओं की स्थिति को सुधारने और सती–प्रथा को रोकने व विधवाओं के पुनर्विवाह के लिए भी उन्होंने बहुत प्रयास किए। सावित्रीबाई फुले ने अपने पति के साथ मिलकर काशीबाई नामक एक गर्भवती विधवा महिला को न केवल आत्महत्या करने से रोका अपितु उसे अपने घर पर रखकर उसकी देखभाल की और समय पर प्रसव कराया। बाद में उन्होंने उसके पुत्र यशवंत को दत्तक पुत्र के रूप में गोद ले लिया और खूब पढ़ाया–लिखाया जो बाद में एक प्रसिद्ध डॉक्टर बना।

साहित्य सृजन

सावित्रीबाई द्वारा लिखा गया गद्य एवं पद्य में साहित्य यद्यपि कम उपलब्ध है, पर जितना उपलब्धा है वह उनके आन्तरिक ज्ञान का दर्पण है। उन्हें आधुनिक मराठी काव्य का अग्रदूत माना जाता है। कवयित्री के रूप में सावित्रीबाई फुले ने दो काव्य पुस्तकें लिखीं–

1. 'काव्य फुले'
2. 'बावनकशी सुबोधरत्नाकर'

बच्चों को विद्यालय आने के लिए प्रेरित करने के लिए वे कहा करती थीं। मराठी में रचित उनकी कुछ कविताओं का हिन्दी रूपान्तर निम्न प्रकार मिलता है:–

1. "सुनहरे दिन का उदय हुआ, आओ प्यारे बच्चों आज। हर्ष उल्लास से तुम्हारा, स्वागत करती हूं आज।।"
2. ''करे नित पढ़ाई ज्ञान पाने के लिए
विद्या को समझकर सर्वोच्च
लीजिए लाभ विद्या का
मन के एकाग्र करते हुए।''
3. ''विद्या ही धन है,सभी धन–दौलत से सर्वश्रेष्ठ अच्छा जिसके पास है ज्ञान का भण्डार, है वह ज्ञानी जनता की नजरों मे सच्चा''

4. ''जाओ जाकर पढ़ो–लिखो, बनो आत्मनिर्भर, बनो मेहनती काम करो–ज्ञान और धन इकट्ठा करो''

दलित उत्थान में अतुलनीय योगदान

सावित्रीबाई फुले ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। समाजोत्थान के अपने मिशन पर कार्य करते हुए ज्योतिबा ने 24 सितंबर 1873 को अपने अनुयायियों के साथ '**सत्यशोधक समाज**' नामक संस्था का निर्माण किया। वे स्वयं इसके अध्यक्ष थे और सावित्रीबाई फुले महिला विभाग की प्रमुख। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य शूद्रों और अति शूद्रों को उच्च जातियों के शोषण से मुक्त कराना था। ज्योतिबा के कार्य में सावित्रीबाई ने बराबर का योगदान दिया। ज्योतिबा फुले ने जीवन भर निम्न जाति, महिलाओं और दलितों के उद्धार के लिए कार्य किया। इस कार्य में उनकी धर्मपत्नी सावित्रीबाई फुले ने जो योगदान दिया वह अद्वितीय है। यहाँ तक की कई बार ज्योतिबा फुले स्वयं पत्नी सावित्रीबाई से मार्गदर्शन प्राप्त करते थे।

नारी शिक्षा, दलित शिक्षा के प्रचार–प्रसार और सामाजिक कुप्रथाओं के विरूद्ध जो दीप जलाया था वह मशाल बनकर जल रहा था। सन् 1852 तक उनके द्वारा 18 विद्यालय स्थापित कर दिये थे। भारत के इस शैक्षणिक जागरण के प्रयासों को अंग्रेज सरकार ने भी प्रोत्साहित किया। अंग्रेज सरकार द्वारा इन स्कूलों के संस्थापक फुले दंपति को सम्मानित करने के लिए पुणे में एक भव्य समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में फुले दंपति को अभिनंदन पत्र दिया गया, जिसे ज्यातिबा ने अपनी सहधर्मिणी को सौंपा और गर्व भरे स्वर में कहा, 'यह गौरव तुम्हारा ही गौरव है। मैं तो स्कूल खोलने का निमित्त मात्र था, परंतु उनके सफल संचालन का श्रेय तुम्हें जाता है।'' सावित्रीबाई ने यह अभिनंदन पत्र अपने श्वसुर को समर्पित किया और उनके चरण स्पर्श कर आशीर्वाद लिया।

सावित्रीबाई ने नारी को शून्य से शिखर तक यात्रा करने का मार्ग दिखा दिया था और उस मार्ग पर कतारों में नारियॉ पथिक बन गई थीं। उनके सघन प्रयासों से शिक्षा संस्था का पहला सत्र इतना सफल सिद्ध हुआ कि शिक्षिकों का अभाव समाप्त हो गया। यह ऐतिहासिक उपलब्धि थी। सावित्रीबाई का समर्पण अद्वितीय था। उन्होंने ककल्पनीय कार्य सिद्ध किया।

सावित्रीबाई पर अपने पति के विचारों का पूर्ण प्रभाव रहा। अध्ययन के बाद वह गहन चिंतन की जो प्रवृत्ति ज्योतिबा में थी, उसे सावित्रीबाई ने भी ग्राह्य कर लिया था। वे सामाजिक दर्शन में प्रवीण थी और विचारों की अभिव्यक्ति की सरता के साथ तत्व भी सम्मिलित कर देती थीं। 1853 में उन्होंने ''शिक्षा और सामाजिक परिवेश'' विषय पर अपना सिद्धान्त पेश कर विद्वानों को भी चौंका दिया था।

''छात्र–छात्राएं जिस समाज और परिस्थिति से आते हैं, उसका प्रभाव उनके ज्ञानार्जन पर अवश्य पड़ता है। समाज के निर्माण में बहुत से तत्व सहायक संसाधन के रूप में कार्य करते हैं, परंतु सबसे मुख्य तत्व माता की भूमिका है। सुशिक्षित माताओं द्वारा भी शिक्षा के पाठ बच्चों में कुशलता से हृदयंगम कराए जा सकते हैं।''

समाज सेवा और परलोकगमन

28 नवम्बर 1890 को महात्मा ज्योतिबा फुले की मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों के साथ ही सावित्रीबाई फुले ने भी सत्य शोधक समाज को दूर–दूर तक पहुँचाने, अपने पति महात्मा ज्योतिबा फुले के अधूरे कार्यों को पूरा करने व समाज सेवा का कार्य जारी रखा। सन् 1897 में पुणे में भयंकर प्लेग फैला। प्लेग के रोगियों की सेवा करते हुए

सावित्रीबाई फुले स्वयं भी प्लेग की चपेट में आ गईं और 10 मार्च सन् 1897 को उनका भी देहावसान हो गया।

उस जमाने में ये सब कार्य करने इतने सरल नहीं थे जितने आज लग सकते हैं। अनेक कठिनाइयों और समाज के प्रबल विरोध के बावजूद महिलाओं का जीवन स्तर सुधारने व उन्हें शिक्षित तथा रूढ़िमुक्त करने में सावित्रीबाई फुले का जो महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है उसके लिए देश हमेशा उनका ऋणी रहेगा। सचमुच जहाँ आज भी हम लैंगिक समानता के लिए संघर्ष कर रहे हैं वहीं अंग्रेजों के जमाने में सावित्रीबाई फुले ने एक दलित महिला होते हुए महिलाओं की शिक्षा, उत्थान और हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ जो संघर्ष किया वह अभूतपूर्व और बेहद प्रेरणादायक है। ऐसी महान आत्मा को शत–शत नमन!

संदर्भ

1. अनिता भारती, सावित्रीबाई फुले की कवितायें।
2. आचार्य सूर्यकान्त भगत, सावित्रीबाई फुले और उनकी काव्य संपदा।
3. सुशीला कुमारी, सामाजिक क्रांति की वाहक सावित्रीबाई फुले।
4. रजनी तिलक, भारत की पहली शिक्षिका सावित्रीबाई फुले।
5. विकीपीडिया।